आत्मिक चोट

डॉ. चेतना उपाध्याय*

पार्क में ठण्डी-ठण्डी हवा चल रही थी, पत्तों की सरसराहट भी साथ में बड़ा ही कर्णप्रिय संगीत साध रही थी। इधर लिली के फूलों की भी निराली छटा, कहीं लाल तो कहीं श्वेत, मुग्ध किए जा रही थी, और मैं प्रकृति की इस अनुपम छटा का आनन्द लेने में मशगूल थी। कभी-कभी तो नसीब होती है, ऐसी सुखद शाम... जहाँ किसी किस्म की जिम्मेदारी का एहसास साथ न हो। प्रकृति के मध्य अपने आपको यूं खुला छोड़ देना जहाँ, मैं, मेरा पद, गरिमा, मेरा परिवार कुछ भी गले का हार ना बन पाए। तन-मन इतना कोमल कि हवा के झोंकों में बह जाए, वायु की नमी में भीग जाए।

इतने में ही एक युवक अपने 7-8 वर्षीय पुत्र की अंगुली थामे वहाँ आ गया और वे दोनों भी हवा से बतियाते आपस में अठखेलियां करने लगे। मेरी निगाहें प्रकृति की इस अनमोल कृति पिता-पुत्र की जोड़ी में भी, उनकी प्रत्येक क्रियाओं में भी असीम आनन्द प्राप्त करने लगी। कुछ ही देर में पिता मेरे पास ही वहीं बेंच पर निढाल हो पसर गया। पुत्र अभी भी वहीं वटवृक्ष की जड़ों को पकड़ उन पर झूल रहा था उसने वहीं से पिता को आवाज भी दी मगर पिता ने इनकार करते हुए बोला अब और नहीं बेटा मैं थक गया हूं। उसकी आवाज मुझे कुछ जानी पहचानी सी लगी। थोड़ा ध्यान से देखा तो सूरत भी जानी पहचानी ही थी। पुनः उसकी ओर देख पहचानने की कोशिश की, कुछ याद तो नहीं आया। मगर वह युवक कुछ ठिठक सा गया। मुझे अपनी ओर देख, मुस्कराते चेहरे पर उसकी नजरें न रुकी। वह अजनबीपन के साथ अपना चेहरा पलट विपरीत दिशा में पुनः पसर गया।

मेरे चेहरे पर आई प्रश्नवाचक निगाहों को उसने यों ही अनुत्तरित सा छोड़ दिया जो कि मुझे नागवार गुजरा, पर मैं कुछ ना कर सकी। पुनः बच्चों की क्रीड़ाओं का लुत्फ उठाने लगी यों ही साक्षी भाव से.. नहीं नहीं यह सरासर झूठ है। मैं अपने आपको इस झूंठ से बहला नहीं सकती। सच तो यह है कि मैं उस बच्चे के चेहरे में भी अपनापन देखरही थी जबकि उन दोनों के भीतर मुझे देख, कोई उथल-पुथल नहीं हुई थी। वे यों ही निर्विकार भाव से अपने आप में डूबे हुए थे। पर हाँ, मेरी बेचैनियां उन्होंने बढ़ा दी थी। कुछ देर यों ही उहापोह में रहकर खुद ही आगे बढ़ उनसे उनका नाम पूछ लिया। बच्चे ने जवाब दिया-अर्णव शुक्ल। अरे वाह बड़ा प्यारा नाम है और वो कौन है? मेरे पापा...उनका क्या नाम है? मिस्टर अशोक शुक्ल। उसने खेलते-खेलते ही जवाब दे दिया।

नाम जानने के बाद भी प्रश्नवाचक चिन्ह मेरे पास ज्यों का त्यों बना रहा। अब मैं प्राकृतिक आनन्द उठा नहीं पा रही थी, अजनबियों से अपनापन मुझे बैचेन किए जा रहा था। फिर मैंने उटपटांग प्रश्नों के माध्यम से उनसे बातचीत का माहौल बनाया। बातचीत के दौरान मेंने पाया कि अशोक शुक्ल मल्टीनेशनल कम्पनी में हैं, 30 लाख का पैकेज है उनका। उनकी पत्नी भी किसी अन्य मल्टीनेशनल में कार्यरत है। उनका भी सालाना पैकेज काफी शानदार है। अर्णव इकलौता पुत्र है। उसके दादाजी भी अपनी जायदाद का बड़ा हिस्सा उस बालक के नाम कर गए हैं। अतः हमने इस बच्चे को अब बोर्डिंग स्कूल में डालने का फैसला किया है। आज शाम की फ्लाईट है। कल इसे बोर्डिंग स्कूल छोड़ हम लौट आऐंगे। अतः आज इसके साथ जी भर के जीना चाहता हूँ। हाँ जी भर कर जी लो। बड़ा प्यारा बच्चा है आपका। अचानक मेरे मुंह से फिसल गया। बस इसी तरह हमारे बीच बातचीत का सिलसिला आगे बढ़ गया। पर हाँ वह आत्मीयता का क्लू अभी तक न मिला था। अचानक बादलों ने बरसना शुरू कर दिया तो तेज-तेज कदमों से हम अपने अपने घरों की तरफ चल दिए। अंतिम प्रश्न चलते-चलते फिर पूछ लिया..अशोक जी आपके पापा का क्या नाम था.... जी

* राजकीय जिला शिक्षण एवं प्रशिक्षण संस्थान
अजमेर, राजस्थान।

दिवाकर शुक्ल ओह... वे क्या करते थे? जी वे रेवेन्यु बोर्ड भोपाल में कमीश्नर थे... इतना सुनते ही मेरी बैचेनी दूर हो गई मुझे इनसे अपनेपन का कारण भी समझ आ गया। और मेरा घर भी आ गया... घर पहुंचते ही मैंने हाथ मुंह धोए चाय चढ़ाई। फिर चाय का कप थामे अपने बेडरूम में आ गई। चाय की चुस्कियों के साथ ही दिवाकर शुक्ल से हुई मुलाकात में खो गई। हुआ यों कि उस वक्त मेरा वजन कुछ अधिक बढ़ गया था। सो उससे निजात पाने में प्राकृतिक स्वास्थ्य केन्द्र पुरी गई थी। वहीं श्री दिवाकर शुक्ल से मेरी मुलाकात हुई थी मैं अपना अतिरिक्त वजन वहीं छोड़ना चाहती थी। वे भी मधुमेह, बी.पी., हृदय रोग सभी की दवाईयों से छुटकारा चाहते थे। पुरी का यह प्राकृतिक चिकित्सा केन्द्र बगैर दवाइयां स्वास्थ्य लाभ प्रदान करता है।

कुछ ही दिनों के साथ ने उनके जीवन के विशिष्ट पहलुओं पर भी प्रकाश डाल दिया था। वह भी एक जटिल पहलू था। उससे भी वे मुक्ति चाहते थे। उनकी कही बातें एक-एक कर दृश्य स्वरूप मेरी आंखों के आगे तैरने लगी। उन्होंने बताया कि मेरी सेवा निवृत्ति पर बेटे-बहू व बेटी-दामाद ने बेहद शानदार आयोजन किया था। हाँ इसमें मेरे भाइयों का भी विशेष हाथ था। योजना, तैयारी, क्रियान्विति सब कुछ में उस वक्त पार्लर से सज-धज कर लौटी, बेटी व बहू दोनों ही बड़ी खूबसूरत लग रही थी। दोनों के ड्रेस लेटेस्ट ट्रेण्ड के थे, लगभग एक सी ही दिखाई दे रही थीं दोनों। बहू व बेटी के मध्य कहीं कुछ भी अंतर ना था। शानदार कार्यक्रम के बाद सभी अपने-अपने घरों को लौट गए। भोपाल के होटल को खाली कर मैंने अपने कक्ष से भी अपना सामान पैक कर लिया था। बेटी दामाद जाने लगे तो उन्हें भी विदाई में एक हीरे का हार सेट, एक पचमढ़ी में फार्म हाऊस की चाबी व उसके कागजात दिए, नातिन के लिये एक खूबसूरत ड्रेस व साइकल भेंट की। साथ ही बेटे-बहू को भी एक सामान वही हार, फार्म हाउस, ड्रेस, साइकल प्रदान कीं सभी बहुत खुश थे।

चलते समय बेटे ने पूछा पापा भोपाल का घर तो खाली कर दिया है। अब आप....? मैं अब तुम्हारे साथ इन्दौर... हाँ, हाँ पापा क्यों नहीं? मेरे पास थ्री बी.एच. के फ्लेट है। आराम से आप सेट हो जाएंगें। फिर हम इन्दौर आ गए। खुशी खुशी एक माह आराम से गुजर गया। वहाँ मोहनी ने बडी सेवा चाकरी की वह घर की साफ, सफाई, बर्तन, कपडे, सभी कार्य मुस्तैदी से करती थी। खाना भी बड़ा ही लजीज पकाती थी। सच कहूं तो मेरा व्यक्तिगत तौर पर ध्यान भी वही रखती थी। सर की मालिश हो सोते वक्त पैर दबाना हो या मेरा पंसदीदा भोजन तैयार करना हो सभी कुछ वह हंसते हंसते खुशी खुशी करती थी। इस सेवा निवृति के बाद के प्रथम माह में सर्वाधिक समय मोहनी के साथ ही व्यतीत हुआ था मेरा। बेटे-बहू सवेरे सात बजे निकल जाते थे। एक घण्टा जिम में बिताकर वहीं स्विमिंग पूल पर थोड़ा रिलेक्स कर वे अपने ऑफिस निकल जाते थे। लंच उनका वहीं अपनी कैंटीन में ही होता था। पोता भी टिफिन लेकर जाता था। मोहनी बड़ा ही अच्छा नाश्ता/खाना पैक कर देती थी उसका। अर्णव स्कूल से सीधे ही हॉबी क्लास चला जाता था। चार बजे वहाँ से लौटता तो दूध या फ्रूट ज्यूस जो भी उसकी इच्छा होती, मोहनी तुरंत पेश कर देती थी। वह थोड़ी देर वीडियों गेम खेलता फिर ट्यूशन चला जाता था। वहाँ से लौटता तब तक सात बज जाते थे। फिर कार्टून चैनल शुरू हो जाता हम दादा पोते कार्टून्स के मजे लेते फिर बेटे-बहु भी लौट आते थे। दोनों ही बहुत थके हुए होते थे। कभी-कभार मैं भी थोड़ा बतिया लेता था उनसे। पत्नी तो पांच वर्ष हुए स्वर्ग सिधार गई थी। आस पड़ौस में कोई परिचित था नहीं। तो अक्सर मोहनी से ही बातचीत थोडी बहुत नियमित रूप से हो जाती थी।

एक दिन शाम को बहू ने पूछा आप दीदी के पास उज्जैन कब जा रहे हैं? यहाँ हमारे पास रहते हुए आपको एक माह हो गया है। एक माह वहाँ भी रह लीजिएगा। आपके लिए टैक्सी बुक करा देती हूँ, आप कब जाना चाहेंगे? सवेरे या शाम को ड्राइवर को समय नोट करवाना पड़ेगा ना। मैं एक पल को सोच में पड़ गया कुछ जवाब एकाएक सूझा नहीं। तो बहु ने ही चुप्पी तोड़ी। कल शाम चार बजे की बुकिंग करवा देती हूँ। आपको अपना सामान पैक करने का थोड़ा वक्त मिल जाएगा। हाँ यह ठीक रहेगा। मुझे भी अच्छा लगा कि चलो बेटी दामाद से मुलाकात हो जाएगी। कमिश्नर पद पर रहते तो इतनी व्यस्तता रहती थी कि इस तरह के मेल मिलाप की सोच ही नहीं पाते थे। खैर अगले दिन, रात को बिटिया के घर पहुंच गया। दो चार दिन बड़ी मस्ती में गुजर गए। यहाँ

भी बेटी दामाद का लगभग वही रूटिन था। मुझे लगा वास्तव में आज की इस आपा-धापी वाली जिन्दगी में सेवानिवृत्ति ही कुछ सुकुन दे पाती है। किसी किस्म का कोई तनाव नहीं, मर्जी से सोओ, मरजी से जागो। समय पर अच्छा-अच्छा गरमागरम भोजन करो। वास्तव में यह पहले संभव था ही नहीं। मजा आ रहा था जिन्दगी का, पर बेटी दामाद के घर पहली बार चार दिन रुका हूँ। शाम को बिटिया को कहा कल सवेरे इन्दौर निकलूंगा। टैक्सी कोई परिचित में हो तो बुक करवा दो। अरे पापा कल शनिवार है भैया का हाफ डे होता हे। वे ही आ जाएंगे, उनकी भी आउटिंग हो जाएगी। रविवार शाम उनके साथ ही लौट जाना। हाँ यह आइडिया भी अच्छा है। रविवार सवेरे सभी महाकालेश्वर के दर्शन भी करेंगे। सभी साथ होंगे तो मजा आएगा। मेरी बात खत्म होने से पूर्व ही उसने भाई को फोन लगा दिया।

अशोक बोला मैं अभी अपना शिड्यूल चैक करके बताता हूँ। हाँ भई, जल्दी बताना, पापा को यहाँ हमारे घर तीन चार दिन हो गए हैं ना तो उन्हें बस अब वापस लौटने की लग रही है। बेटी ने मानो मेरे मन की सी बात कह दी। फिर वही थोड़ी बहुत औपचारिक बातचीत के बाद अगले फोन के इंतजार पर बात खत्म हुई। शनिवार दोपहर तक अशोक का फोन नहीं आया। तो मैंने ही फोन लगा लिया। पर व्यस्तता के कारण बात नहीं हो पाई। शाम भी निकल गई। फिर दुबारा फोन लगाया तो बेटा बोला बहुत बिजी चल रहा हूँ। अभी तो नहीं आ पाऊँगा। अगले हफ्ते देखता हूँ। समय मिलता है तो... तुम बिजी हो तो कोई बात नहीं बेटा में खुद ही टैक्सी करके आ जाऊंगा। देख लो, जैसी आपकी इच्छा, कहकर उसने फोन रख दिया। थोड़ी देर में ही बहू का फोन आ गया। वो बोली दीदी क्या बात है? आपके घर पापा का मन नहीं लग रहा क्या? हमारे घर तो आराम से पूरा महीना रह लिए, मैंने ही याद दिलाई थी कि दीदी के घर भी रह लो थोड़ा उनको भी आपसे मिलकर अच्छा लगेगा। अरे भाभी ऐसा नहीं है। हमें तो पता ही नहीं चला कि कब तीन चार दिन गुजर गए। पापा इतना समय हमारे घर पहली बार ही रुके है ना... लो आप पापा से ही बात कर लो। उसने मुझे फोन पकड़ा दिया। बहू से दो चार औपचारिक बातें हुई। मैने कहा मन तो लग रहा है। मेरे लिए तो जैसा इन्दौर वैसा उज्जैन। तुम लोगों का रूटिन भी लगभग एक सा ही है। पर बेटा ऐसा है ना कि बेटी के घर ज्यादा रुकना ठीक नहीं लगता। मिलना हो गया। अब अपना घर तो पुकारता ही है। पर पापा आपने अपना घर भोपाल वाला बेच दिया। हाँ वह तो है। पर बहुरानी मेरा वारिस तो मेरा तो बेटा ही होगा ना। बिटिया तो विवाह पश्चात् अपने परिवार की रानी हो गई। जिस तरह तुम हमारे घर की रानी हो... वह घर तो बेटे के नाम होने पर भी अपना ही कहलाएगा। हाँ वो तो है। पर पापा आप तो बेटे-बेटी में फर्क ही नहीं करते? आपने तो अपनी अधिकतम जायदाद बेटे और बेटी में समान रूप से बांट दी। तब तो आपको नहीं लगा कि बेटा वारिस है तो उसको थोड़ा ज्यादा दूं?

बहु का इशारा समझ में आते ही मैं निरुत्तरत हो गया आंखों के आगे एक पल को अंधेरा सा छा गया.... फोन हाथ में से छूट गया। मैं वहीं रखे सोफे पर धम्म से धंस गया। पास खडी बेटी भी सारा माजरा समझ गई। मुझे सहारा देते हुए बोली, कोई बात नहीं पापा, एक महीना हमारे घर भी रह लो, क्या फर्क पड़ता है। भाभी के कलेजे में भी थोड़ी ठंडक पड़ जाएगी। बिटिया की आवाज भी कुछ कलुषित सी हो आई थी। मैंने आंखें मूद सोने का उपक्रम किया। मुझे नींद में जान, बिटिया भी अपने काम में व्यस्त हो गई। कमिश्नर पद पर रहते अनेकों बार त्वरित निर्णय किए थे। मगर यह परिवार है और मैं सेवानिवृत्त... यही कारण था शायद कि मैं त्वरित निर्णय न कर सका। मेरी आंखों से नींद कोसों दूर थी। वैचारिक श्रृंखला अघोषित दीवार सी अड़ी थी। खैर... सवेरे पास वाले पार्क में टहलने निकल गया। शुद्ध हवा, विचारों को भी शुद्धता प्रदान कर ही जाती है। पचमढ़ी बेहद खूबसूरत जगह है। वहाँ तो हमेशा ही शुद्ध वायु मिलती है। हम अक्सर सेमिनार वहीं रखवाते थे। दोनों बच्चों के लिए फार्म हाउस भी यही सोच कर लिया था कि उन्हें भी वहाँ आकर रहने व शुद्ध वातावरण में जीने का अवसर मिल जाएगा। मैं भी जब मरजी तफरीह मार लिया करुंगा। पर शायद मैं गलत था।

मैंने फिर उस एजेन्ट को फोन लगाकर कहा जिससे बच्चों के लिए फार्म हाउस बुक करवाए थे। रवीश जी मुझे एक फार्म हाउस और चाहिए। अच्छा सुनो, यदि अभी उपलबध ना हो तो कोई बात नहीं। कोई छोटा सा दो कमरों का घर भी मिल जाए तो चलेगा... ठीक है साहब में देखता हूँ... फिर दस दिन बाद पुनः रवीश को फोन लगाया। अरे साहब, आपने मुझे कह

दिया था अब निश्चिंत हो जाइये। जैसे ही कोई घर नजर आएगा तो मैं आपकी बुकिंग कर दूंगा। हाँ वो तो है मुझे आप पर पूरा भरोसा है। आप भी काफी व्यस्त रहते हो तो सोचा याद दिला दूं। हाँ सर व्यस्तता तो है ही फिर यह टूरिस्ट प्लेस है। पुरातात्विक विभाग भी सक्रिय है यहाँ। इसलिए भी कोई खरीद फरोख्त आसानी से नहीं हो सकती। पहले की बात और थी। आप सरकार की प्रशासनिक सेवा में थे। पर खैर चिंता मत करो, मैं कोई न कोई जुगाड़ तो बैठा ही लूंगा। महीना पूरा होते ही मैं टैक्सी से इन्दौर आ गया और इस तरह मेरा जीवन मासिक चक्र से बंध गया। मुझे लगने लगा कि मैं एक फुटबाल हूँ जिसे माह पूरा होते ही दूसरे पाले में उछाल दिया जाता है। पचमढ़ी में छोटा सा घर का सपना पूरा नहीं हो पा रहा था। इधर मैं अपने आपको लज्जित सा महसूस करता जी रहा था। बच्चों का संस्कार विहीन व्यवहार खुद को ही कटघरे में खड़ा कर जाता था। सो यह बात किसी और से कही भी नहीं जा सकती थी। एक फांस सी गले में अटकी रहती थी। जिसे ना उगलते बने ना निगलते। अन्दर ही अन्दर ही घुलते-घुलते मैं कुछ मनोशारीरिक रोगों से ग्रसित हो गया। रोग का कारण मैं जानता था अतः किसी चिकित्सक से इलाज लेने का मन भी ना बना पाया।

फिर माह के अंत में बेटे के घर से निकला बेटी के घर की बजाए पुरी के प्राकृतिक चिकित्सा केन्द्र में आ गया। बच्चों की दुनिया से दूर, बहुत दूर, यहाँ के रजिस्टर में भी अस्पष्ट सी आभासी जानकारी भर दी। जिससे पहचान जाहिर न हो सके। अपना फोन भी वे घर पर ही छोड़ गए थे। टैक्सी भी रास्ते में बदल ली तो यह जानकारी भी किसी को न हो सकी कि वे कहाँ से आए हैं। सच है! कभी-कभी आत्ममान की अभिलाषा जीवन की दिशा ही बदल देती है। जानी मानी हस्ती बेटे/बेटी पोता, नातिन सभी दृष्टिकोण से सम्पन्न होते हुए भी यहाँ गुमनाम से आम आदमियों जैसा जीवन जी रहे थे। अधिकारी वाले रौब की परछाई भी न थी उनकी। स्वस्थ्य, सुगठित शरीर, स्वस्थ्य सात्विक विचार सकारात्मक व्यवहार, मंद मुस्कान, नपे तुले शब्द उनके गौरव की गाथा स्वतः ही कहते प्रतीत होते थे। ओह मैं कहाँ खो गई। उस अजनबी पिता पुत्र में मुझे अपनापन क्यों दिखाई दे रहा था। अब समझ में आ गया था वे दोनों भी पूर्णतः दिवाकर शुक्ला जी की ही कद काठी, शक्ल सूरत के से थे। आवाज भी मिलती थी। तभी तो उनकी आवाज सुन चौंकी थी मैं। इतनी समानता है कि उन्हें अपने पुत्र सेवा, मोह ममता से दूर होना पड़ा था। यहाँ पुत्र भी अपने पुत्र को अमेरिका के बोर्डिंग स्कूल में डाल स्वतः ही उन स्थितियों से दो चार होने को तत्पर सा दिखाई दे रहा था। पिता के साये में, भारत में रहते हुए पुत्र अपने संस्कारों से पृथक् दिखाई दे रहा था। पिता से दूर उस विदेशी धरती पर हम भारतीय संस्कारों के बने रहने की बात कैसे सोच पाएंगे। खैर शायद यही प्रकृति का नियम है। जैसी करनी वैसी भरनी के कुछ-कुछ संकेत आभासित रूप में या यों कहें काल्पनिक रूप में दिखाई दे रहे थे।

दिवाकर शुक्ल जी का साथ मात्र एक माह का ही मिला था। मुझे आज भी याद है चार अगस्त दो हजार बारह को वे सवेरे प्रार्थना के दौरान योगनिद्रा में चले गए थे। 24 घण्टे पश्चात् भी उनकी निद्रा भंग न हुई तो चिकित्सक को बुलवाया। और उन्होंने आकर दिवाकर जी को योगनिद्रा की बजाय चिरनिद्रा में होना घोषित कर दिया। ओह... वे दूसरी दुनिया में इतनी शांति से कूच कर गए। हम समझ ही नहीं पाए। उनके द्वारा रजिस्टर में अंकित फोन नम्बर, स्थायी निवास का पता कहीं उपलब्ध ही न था। दो दिवस तक उनकी मृत देह को सुरक्षित रखा गया। फिर वहीं पोस्टमार्टम, पुलिसकेस, पंचनामा पश्चात् उनकी देह को अग्नि को समर्पित कर दिया गया। उनके बैग में भी दो जोड़ी कपड़ों के अलावा और कुछ ना मिला। उनके चेहरे पर वृद्धावस्था की एक भी शिकन नहीं थी। मगर उनके भीतर वृद्धावस्था की गूढ़ समस्या मौजूद थी। जिसे उन्होंने कभी खुलकर अभिव्यक्त नहीं किया। शायद वह भीतर ही भीतर खोखले हो चुके शरीर का बोझ सह न सके। आत्मिक चोट बड़ी गंभीर होती है वे उससे उबर ना पाए। वे बहुत कम बोलते थे। यह सच है मगर पांच माह बाद उनकी बातों की कड़ी से कड़ी जोड़ खूब दौड़धूप के पश्चात् उनकी पहचान हो पाई। तब जाकर उनका बेटा आया उनका मृत्यु प्रमाण पत्र लेने...

❐❐❐❐